

आगम निबंध माला। ग्रंथ १६

13595

ॐ

वैदिक जल-विद्या।

लेखक और प्रकाशक।

श्रीपाद दामोदर सातवळकर

स्वाध्याय मंडळ, अध [विश्वविद्यालय]

द्वितीय नाम १०००

—०*०—

संवत् १९८०, शक १९४०, मन १९२३

मृत्यु =) दो जान

वैदिक धर्म ।

वैदिक तत्त्वज्ञान प्रचारक मासिक पत्र ।

वैदिक धर्म के ओजस्वी विचार स्पष्ट रूपमें बतानेके लिये ही यह मासिक है । यदि आप इस मासिक के लेख पढ़ेंगे, तो वैदिक मंत्रोंके गूढ़ और उच्च विचारोंके साथ आपका परिचय होगा ।

योग साधन पर अनुभव के लेख इस मासिक में प्रकाशित होते हैं । इनको पढ़नेसे योग मार्गका ज्ञान सुगमतासे प्राप्त करके आप शारीरिक स्वास्थ्य, इंद्रिय संयम तथा चित्तकी प्रसन्नता का अनुभव लेते हुए अपनी शक्ति विकसित करनेके सुगम उपाय जान सकते हैं ।

वार्षिक मूल्य ३॥) रु है । शीघ्र ग्राहक बन जाइये ।

मंत्रो—स्वाध्याय मंडल, औध (जि नातारा)

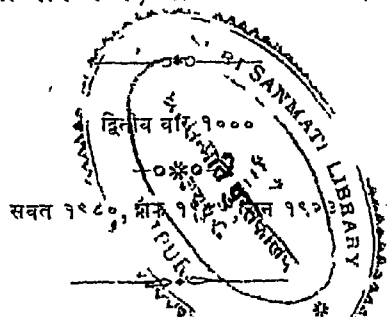
आगम निबन्ध माला । ग्रंथ १६



वैदिक जल-विद्या।

लेखक और प्रकाशक ।

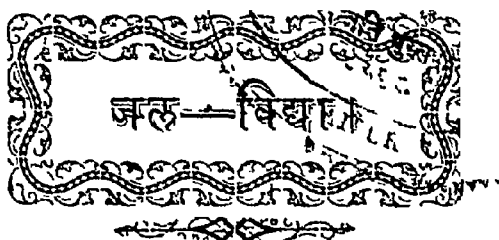
श्रीपाद दामोदर सातवळेकर
स्वाध्याय मंडल, औंध (जि सातारा)



जल-विद्या ।

वैदिक जलविद्या आरोग्य के साथ संबध रखती है । रोग दूर करना, आरोग्य सुरक्षित रखना, दीर्घजीवन प्राप्त करना और बलका संवर्धन करना इत्यादि सिद्धियों के लिये जलका योग्य रीतिसे योग्य उपयोग करने का उपदेश देनेवाले वेदके अनेक मंत्र इसी जलविद्या के प्रकाशक हैं । इस लेख में उनमें से थोड़ेसे मंत्रोंका विचार किया है । विद्वान पाठक अधिक खोज करेंगे तो जनतापर बहुत ही उपकार हो सकते हैं ।

औंध, [जि. सातान] } निवेदक
१ कार्तिक १०८० } श्रीपाद दामोदर सानवळेकर
स्वाध्याय-मंडल ।



वेदमें अनेक विद्याओंका उपक्रम है। वेदका पठन पाठन यदि वेदिक रीतिसे चलने लगेगा, तो वैदिक विद्याओंका प्रचार और विस्तार हो सकता है। वेदकी भाषा बहुत कठिन नहीं है, परतु वेदिक शब्दोंका आंतरिक भाव तथा शब्दार्थका मर्म समझना सुगम कार्य नहीं है। इसलिये बीसियों वर्षोंतक सैंकड़ों पंडित निष्पक्ष पातको दृष्टिसे इस विषयको खोजके लिये लगने चाहिए। आज कल किसी िसां स्थानपर वेदविद्याका अन्वेषण प्रारम्भ हो गया है, इसमें कोई संदेह नहीं। परतु पूर्वप्रहसे जिनका मन कलुषित हुआ है, वे अपने ही मिद्धात वेदमें देखने लगते हैं। इस प्रकारके लोग वेदका सत्य अर्थ करनेके लिये अयोग्य हैं।

वेदके अतर्गत प्रमाणोंसे ही वेदका अर्थ स्वयं प्रकाशित होना आवश्यक है। जब आंतरिक प्रमाणोपर दृष्टि रखी जायगी, तब अन्य बाह्य प्रमाणोंका युक्तता और अयुक्तता बिना संदेह स्पष्ट हो सकती है।

इस समय आंतरिक प्रमाणोंसे वेदका अर्थ करनेमें अशुद्धियां भी हो सकती हैं, क्योंकि आंतरिक प्रमाणोंको कसौटी ठोक प्रकारसे साध्य होनेके लिये जिस प्रकार चारों वेदोंकी उपस्थिति

चाहिए और सपूर्ण वैदिक वाङ्मयका परिज्ञान जिस प्रकार चाहिए, वैसा इस समय किसीको नहीं है। इसलिये प्रामाणिक प्रयत्न करनेपर भी अशुद्धि होना संभव है। परंतु जिस प्रकार चूहोंके डरके मारे मकान बनाना लोक वद नहीं करते उसी प्रकार अशुद्धियोंके भयके कारण वेदविद्याके संगोधनका कार्य किसीको बंद नहीं करना चाहिए। यदि किसीके लेखमें अशुद्धि हो गई तो आगे आनेवाले आविष्कारक पांडित उसको ठीक करेंगे। सैंकड़ों मनुष्योंके प्रामाणिक प्रयत्नसे वेद विद्याका पुनरुद्धार हो सकता है। अन्यथा दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

आज इस लेखमें वेदकी जलविद्याके विषयमें कुछ थोड़े विचार संगृहित करनेका यत्न करना है। विचिकित्सक पाठक इनका विचार करें और सोचें कि वास्तवमें वेदका मतन्य कितना उच्च और श्रेष्ठ है।

इस लेखमें 'जल' के विषयमें विचार करना है। इसलिये सबसे प्रथम जलके नामोंका विचार करेंगे। निघण्टु अ. १। १२ में जलके सौ नाम दिये हैं। उनमें 'जन्म' शब्द है। जो जन्म लेता है उसका नाम 'जन्म' हो सकता है। इस वैदिक नामसे यह बात स्पष्ट होती है, कि पानीका जन्म होता है। अथवा पानी उत्पन्न होता है। जन्म प्राप्त करनेका तात्पर्य बनने अथवा उत्पन्न होनेसे है। सृष्टिके सब ही पदार्थ जन्मते हैं, फिर वेदने जलका ही नाम 'जन्म' क्यों रखा, इस बातका पता लगाना आवश्यक

है । अन्य पदार्थोंके जन्मकी अपेक्षा पानीके जन्ममें कुछ न कुछ विशेषता अवश्य होगी । जलका जन्म कुछ असाधारण प्रतीत होता है । आधुनिक विज्ञान—शास्त्र कहता है, कि दो वायुओंके मंयोगसे जलका जन्म होता है । अर्थात् आधुनिक विज्ञानके अनुसार भी जलका 'जन्म' नाम सार्थ हो सकता है । परंतु इसका विचार करनेके पूर्व जलवाचक अन्य नामोंका यहां विचार करेंगे ।

'भूतं, भुवनं, भविष्यत्' ये तीन शब्द वेदमें जल वाचक हैं । पूर्वोक्त निघण्टुका भाग देखिए । 'भु' धातुसे ये तीनों शब्द बनते हैं और 'भु' धातुका अर्थ To be to become, to be born, to be produced होना, बनना, जन्म होना, बनाया जाना, यह है । अर्थात् इन अर्थोंका विचार करनेसे उक्त शब्दोंके अर्थ 'बनता था, बनता है, और बनेगा' इस प्रकार हो सकते हैं । इन अर्थोंका तात्पर्य यह है कि जिन नियमों के अनुसार जलका जन्म पूर्व समयमें होता था, उसी प्रकार अब भी हो सकता है और भविष्यत्में भी होगा । जल बननेके जो नियम हैं विलकुल अटल हैं, यह भाव उक्त अर्थोंमें टपकता है ।

जलके सो नामोंमें 'रेतः' शब्द है । अर्थात् वेदमें 'रेतः' का अर्थ 'उदक' है । साधारण भाषामें 'रेत' शब्दका अर्थ पुरुषका वीर्य है, परंतु वेदमें जल अर्थमें रेत शब्द प्रयुक्त है । इस शब्दका भाव मनमें धारण करनेसे ब्राम्हण अर्थोंमें आई हुई मित्रावरुणोंकी एक कथा विद्यत हो सकती है । परंतु उक्त मैत्रा - वरुणोंय गाथा देखनेके पूर्व निम्न वचन देखिए ।

मित्रावरुणौ त्वा वृष्ट्याऽवताम् ॥

वा. यजु. २ । १६ । अत. त्रा. १ । ८ । ३ । १२

‘मित्र और वरुण वृष्टि करके तुम्हारी रक्षा करें ।’ इस मन्त्रमे कहा है कि जलको उत्पन्न करनेका कार्य मित्र और वरुणोंका है । मित्र और वरुण दोनों देव जल उत्पन्न करते हैं और वृष्टि बरसा देने हैं । अर्थात् पानीका जन्म मित्रवरुणोंके संबंधसे होता है इनमें स्त्रीपुरुषसंबन्ध नहीं है । दोनों पुरुषही हैं और दोनों मिलकर जलको उत्पन्न करते हैं । यही भाव अथर्ववेदकी श्रुतिमें है ।

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपती तौ मावतां ॥

अथर्व. ५ । २४ । ५

‘मित्र और वरुण ये वृष्टिसे अधिपती हैं वे दोनों मेरा रक्षण करें ।’ इस श्रुतिमें भी मित्रावरुणोंका संबंध वृष्टि अर्थात् जलके साथ बताया है । इस संबंधका विचार करते हुए आप मित्रावरुणीय गायिका विचार कीजिये ।

मित्रावरुणोंकी कथा — भगवान् देवदेवेश्वर इंद्रके द्वाराग्ने सत्र देव विराजमान हुए थे, उनमें अपने अपने स्थानपर मित्र और वरुण भी बैठे थे द्वारके कार्य समाप्त होनेके पश्चात् अप्सराओंका गायन और नाच शुरू हो गया । जब उर्वशी नाचने लगी तब मित्रावरुण मोहित हो गये और उनसे भक्तका स्खलन हो गया—

मित्रावरुणयो रेतश्चकद ।

मित्रावरुणोंसे एकदम रेत स्खलित हो गया । यदि यहा रेत

शब्दका अर्थ उदक मन लिया जाय और मित्र वरुणोंको वायु माना जाय, तो उक्त कथाका वीभत्स और अश्लील भाव हट जाता है, और प्रतीति होने लगता है, कि यह एक निसर्गकी घटनापर रूपक रचा है ।

ऐतिहासिक लोक समझते हैं. की यह कथा इसी प्रकार बनी थी । परंतु ऐसा माननेमें कई दोष प्रतीत होते हैं । (१) स्वर्गमें पुण्य करनेवाले धार्मिक लोक जाते हैं, वहा वारागनाओकी क्या आवश्यकता है / धार्मिक लोक वेद्यागमन नहीं करते । (२) यदि वहा स्वर्गमें भी वेद्याण है ऐसा माना जाय, तो भी मित्र और वरुण ये दो (पुण्यकृतो राजानौ । निरु) पुण्य कर्म करनेवाले राजा थे । ऐसे सदाचारि राजाओंका भर दरबारमें देनोका एकदम वीर्य न्वलन होना यह अमभव प्रतीत होता है तथा इसका सत्यता माननेपर भी इस निज अथवा गुप्त बातका सब जगत्में प्रचार क्यों किया गया / इत्यादि विचारसे पता लग सकता है कि यह व्यावहारिक घटना नहीं है, प्रत्युत कुछ आलंकारिक गूढ़ इस कथामें अवश्य है ।

‘ रेत ’ शब्दका अर्थ वेदिकभाषामें ‘ उदक ’ है, यह बात पूर्वोक्त निर्घटुकें आधारमें बताई है । यही यह अर्थ इस गाथामें देखा जायगा तो सब अश्लील भाव लुप्त हो जाता है । और इस बातका संभव प्रतीति होने लगता है, कि कदाचित् मित्र और वरुण ये दो वायु होंगे कि जिनसे जल उत्पन्न होता है । मित्रा

वरुणसे रेतकी उत्पत्ति हो गई, अर्थात् दो वायुओंके सयोगसे जलकी उत्पत्ति हो गई, ऐसा अर्थ विलकुल सीधा प्रतीत होता है।

इंद्रके दरबारके विषयमें हमें बहुत दूर जानेकी जरूरत नहीं है। प्रत्येक रात्रीमें हम आकाशमें स्वर्गका दर्शन करते हैं। चंद्र, गुरु, शुक्र, शनि आदि मय ग्रह तारा और नक्षत्र गण जहां रहते हैं, वह ही इंद्रका दरबार है। दू-वीनसे इसका दर्शन दिनके समयमें भी हो सकता है। अर्थात् यह खगोल ही स्वर्ग है। इस पृथ्वी लोकको 'इह लोक, ऐहिक, मृत्यु लोक' कहते हैं और ऊपरले तेजस्वी खगोलको 'आम्नामिक, स्वर्गलोक' कहते हैं। उपनिषदोंमें भी 'अस्मिंल्लोके अम्नामिंल्लोके' अर्थात् इस लोकमें और उस लोकमें ऐसे शब्द प्रयुक्त होते हैं। तात्पर्य जैसा यह मूलोक मनुष्योंको प्रत्यक्ष है उसी प्रकार स्वर्ग भी प्रत्यक्ष दृश्य है अन्यथा 'अम्नामिंल्लोके' इस शब्दका कोई तात्पर्य ही नहीं है। 'यह ओर वह' ये शब्द जैसे प्रत्यक्ष विषयक होते हैं उभी प्रकार 'आस्मिन्-अमु-मिन्' ये शब्द प्रत्यक्षपर ही हैं। अस्तु। इस ग्रह तारा नक्षत्र नडलके स्वर्गमें पूर्वोक्त कथाका चमत्कार होना है, यह भाव उक्त कथामें स्पष्ट है।

स्वर्गके सूर्यचंद्रादि देव प्रत्यक्ष देखते हैं, उनका व्यवहार हमें प्रत्यक्ष है, वे भ्रमण करते हैं, किसी समय एक दूसरेके पास आते हैं पश्चात् दूर होते जाते हैं, यद्यपि उनका वार्तालाप हम श्रवण नहीं कर सकते तथापि उनका भ्रमणादि व्यवहार हमें

प्रत्यक्ष है। पुराणोंके कथाभाग यदि ठीक प्रकारसे जात होने हैं तो इस स्वर्गधामकी कल्पना से ई हो सकते हैं। इस आकाशरूपी स्वर्गमें अप्सरागण कोन है' उक्त देवताओंके द्वारमें कोन अप्सराएँ हैं कि जो नाचती है? इस प्रश्नका उत्तर 'अप्—सरः' शब्द ही दे सकता है। वैदिक अथवा संस्कृत भाषामें प्रत्येक शब्द उस उस पदार्थका स्वरूप अच्छी प्रकार व्यक्त करता है। यही एक सुभीता है कि जिसके आधारसे वैदिक उपदेशका गूढ़ व्यक्त किया जा सकता है।

'आप्' अर्थात् जलके आश्रयसे जिसका 'सरण' अर्थात् संचार होता है उसका नाम 'अप्—सरः' (अप्सु सरंति इति अप्परसः। अमरकोश—क्षीरवामी टीका १।१।११) अप्सरा होता है। पर्जन्य कालमें आकाशमें मेघ आते हैं, मेघोंकी मयानक गर्जना होती है, बिजलियोंका नाच शुरू होता है और वृष्टि होती है। बिजलियाँ मेघोंके आश्रयसे यहाँ नाचती हैं। बिजली आर जलका इस प्रकार संचार है। जलके आश्रयसे विद्युतका संचार होता है, यही - अप्—सर' पन है। यद्यपि केवल शुद्ध उदक विद्युतका संचार करनेके लिये योग्य नहीं है, तथापि साधारण जल विद्युतके लिये (Good conductor) अच्छा प्रवाहकारी है इसमें कोई संदेह नहीं है। यही भाव तब 'अप्परः' शब्दसे निकलता है।

अप्सरारणोंका नाच भगवान् इन्द्रके दन्वामें चलता रहता है इस बातका अनुभव पाठकगण वर्षाकालमें बारबार देख सकते

हैं । जब अप्सराओंका नाच होता है, उस समय मित्र और वरुण नामक जलदेवोंसे रेत अर्थात् जल गिरने लगता है अर्थात् वृष्टि होती है । इत्यादि रूपक यहां स्पष्ट ज्ञात हो सकता है । अब अप्सराओंके कुछ अन्य अर्थ यहां देखना उचित है—

(१) घृताची—(घृत) उदकवा अंचन अर्थात् प्रवाह करनेवाली । यह एक अप्सराका नाम है । यह विद्युतके लिये विलकुल सार्थ होता है ।

(२) उर्वशी—(उरु वशे यस्याः) जिसके आधीन सब कुछ है उस विद्युत्को उर्वशी कहते हैं । विद्युतके आधीन जगतके अनंत पदार्थ हैं यह बात सुप्रसिद्ध है । इसका दूसरा अर्थभी मनन करने योग्य है । ‘ उरु बहु अश्रुते ’ जो बहुत भक्षण करती है । विद्युतके पतनसे किस प्रकार नाश होता है यह तथा अन्य बातें देखनेसे इस बातका ज्ञान हो सकता है । कि विद्युत्का सर्व भक्षकत्व किस प्रकार है । ‘ सर्वत्र व्यापक ’ ऐसाभी इससे एक भाव निकलता है ।

‘ पुरुरवा और उर्वशी ’ का संबंध नाटक और पुराणोंमें प्रसिद्ध है । ‘ पुरु-रवा ’ का अर्थ ‘ जिसका बड़ा आवाज है ’ ऐसा है मेघोंका गडगडाट इस शब्दके अर्थसे ध्वनित होता है । इसलिये ‘ पुरु-रवा ’ शब्द मेघवाचो है और उर्वशी शब्द विद्युत वाचक है । निरुक्तकार कहते हैं—

पुरु-रवा बहुधा रोरुयते ॥

निरु. ५।४।४६

‘ जो अनेक प्रकारसे बड़ा बड़ा शब्द करता है वह पुरूरवा समझीए । ’ मेघ और विद्युतका संबंध यहा स्पष्ट है । अस्तु । इस प्रकार अप्सराओंका विद्युत होना और विद्युतका मेघों और जल-धरोंके साथ संबंध होना उक्त रूपकका विशेष स्पष्टीकरण स्वयं करता है । विद्युतके चमकाहटके साथ मेघोंसे वृष्टि होगई इतनाही बात उक्त कथामें दर्शाई है । अस्तु । इतना देखने पर भी मित्रावरुणोंके स्वरूपका बोध नहीं होता । क्यों कि मित्रावरुण मेघोंमें रहते हैं ऐसा किसी स्थानपर नहीं कहा । इसलिये मित्रावरुणोंका स्वरूप कुछ विलक्षण होना आवश्यक है । अब वेदमंत्रोंमें देखेंगे कि उनका स्वरूप क्या है—

मित्रं हुवे पूतदक्षं
वरुणं च रिशादसं ।
धिर्यं वृताचीं माधन्ता ॥

१

ऋ. १।२।७

यह मंत्र वायुसूक्तके अद्वय मित्रावरुण देवताका है । इस मंत्रके तीन खंड हैं । उनका अर्थ निम्न प्रकार है—

(१) पूत-दक्षं मित्रं हुवे ।—वलवान मित्रवायुका मैं स्वीकार करता हूँ ।

(२) रिशादसं च वरुणं हुवे ।—जग (मोरचा Brust) चढ़ानेवाले वरुण वायुको भी मैं लेता हूँ ।

(३) घृताऽर्चा धियं साधन्ता ।—ये दोनों जल उत्पन्न करनेका कार्य सिद्ध करते हैं ।

इस मंत्रार्थके साथ उक्त कथाकी तुलना करनेसे जलके जन्मका वृत्तांत ज्ञात हो सकता है । अब मित्र और वरुण कौन हो सकते हैं इसका विचार करेंगे ।

‘ वरुण ’ शब्दका विशेषण ‘ रिश-अदम् ’ उक्त मंत्रमें देखिए । ‘ रिश-अदम् ’ का कर्त्तृ दूसरोका स्वरूप विगाडनेवाला । ‘ रिश्, रिष्, रूश्, रूप् ’ इन धातुओंका अर्थ ‘ विकृत ’ करना, दुःख देना है । इनके रूप ‘ रिष्ट, रूष्ट (Rust) ’ ऐसे होते हैं । इंग्लिश भाषाका Rust शब्द इस धातुसे ही बनना उचित है । यद्यपि कोशोंमें ‘ रुधिर ’ से इसका संबंध जोड़ दिया है, तथापि इतना दूरान्वय करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है । ‘ रूप् ’ धातुमें सीधा ‘ रूष्ट (Rust) ’ बनता है ।

आक्सिजन (Oxygen gas) का धर्म (Oxidize) जंग चढाना है । लोहा आदि धातुओंपर जंग इसी वायुमें होता है । मूल धातुका स्वरूप विगाडना इसका धर्म है और वह ही ‘ रिश-अदम् ’ शब्द बता रहा है । इससे पता लग सकता है कि वरुण वायु आक्सिजनका वाचक होगा । ‘ वरुण ’ शब्दका अर्थ वरन अर्थात् चुनने और पसंद करने योग्य है । आक्सिजन वायु सब प्राणिमात्र अपने जीवनके लिये पसंद करते हैं । प्राणियोंका जीवन इसके बिना नहीं हो सकता, इसलिये यह प्राणवायु है, ऐसा कहा जा सकता है ।

वरुण वायुका इस प्रकार ज्ञान होनेसे मित्रवायुका ज्ञान तर्कसे भी हो सकती है । प्रायः यह हेन्डोजन वायु होगा । क्यों कि ' मि-त्र ' शब्द ' मा माने ' धातुमें बनता है । मिननेवाला, मापनेवाला ऐसा इसका शब्दार्थ है । इंग्लिश भाषामें Metel, metle शब्द इसी ' मित्र ' का रूपान्तर है । ' मा ' धातुमें ' मित्र ' शब्द बनता है और ' मित्र ' शब्दमें Metel, metic शब्द बनता है । इसके और शब्द देखिए—

(१) थर्मो-मीटर Thermo-metar	}	=धर्म-मित्र=उष्णता मापनेका यंत्र ।
(२) ब्यारो-मीटर Baro-metar		
(३) ज्यो-मीटर Geo-metar	}	=गो-मित्र=भूमिति शास्त्रज्ञ ।
(४) हेट्रो-मीटर Hydro-metar		
(५) पायरो-मीटर Pyro-metar	}	=वर्हि-मित्र=अग्निमापक यंत्र ।
(६) लाक्टो-मीटर Lacto-metar		
(७) ज्यो-मेट्री Geo-metry	}	=गो-मित्र=भूमापन विद्या ।

इन शब्दोंके प्रयोगोंमें ' मित्र ' शब्दका Metel शब्दके साथ किस प्रकारका संबंध है इसका ज्ञान हो सकती है । छंद वाचक

meter शब्द है। वहा भी इसका अर्थ 'परिगणित अक्षर' इतना ही है। अर्थात् मित्र शब्दका अर्थ मिननेवाला, मापने और गिननेवाला, यह सर्वत्र सार्थ होता है। मात्रा, मित्र, मीटर metrie आदि सब शब्दोंमें उक्त भाव ही है।

इसलिये 'पूतदक्ष मित्र' का अर्थ 'अन्य पदार्थोंका तोल अथवा माप बतानेवाला बलवान वायु' इतना है। हैड्रोजनसे सबका तोल किया जाता है। इसलिये जलके घटकोंमें मित्रवायु हैड्रोजन ही समभवतः हो सकता है। 'दक्ष' शब्दका अर्थ To increase अर्थात् आकारसे बढ़ना है। यह गुण भी हैड्रोजनके विषयमें संगत हो सकता है। 'पूत' शब्दका अर्थ (Pure) शुद्ध है। शुद्ध हैड्रोजन वायु जो सबका तोल करनेवाला है, वह और प्राणवायु मिलकर जल उत्पन्न करनेका कार्य करते हैं, यह उक्त मंत्रका आशय है।

'मे पूतदक्ष मित्र वायुको लेता हूँ और रिशादस, वरुणको लेता हूँ। ये दोनों मिलकर जल उत्पन्न करनेका कार्य करते हैं।' यह उक्त मंत्रका शब्दार्थ है। पाठक यहां जान सकते हैं कि उक्त शब्दोंमें कितना गूढ़ अर्थ भरा है।

इस सब वर्णनसे जलका जन्म नाम कितना सार्थ है, इस बातका बोध हो सकता है। मित्रावरुणोंका जलके साथ संबध और पूर्वोक्त मैत्रावरुणीय गाथाका गूढ़ार्थ यहां स्पष्ट हो सकते हैं। वेदमंत्रोंके गूढ़ आशयको लेकर ब्राह्मण और पुराणोंमें बड़ी बड़ी कथाएँ बनी हैं। उन कथाओंका तबतक आशय

नहीं समझ सकता, जबतक उनका संबंध मंत्रोंके साथ ज्ञात नहीं होता । इससे वेदके व्याख्यायका कितना महत्व है इस बातका परिज्ञान हो सकता है ।

अतु । अब जलवाचक अन्य नामोंका विचार करेंगे । (१) उदकके सौ नामोंमें 'अमृत' शब्दका पाठ किया है । देव जिम अमृतका पान करते हैं वह अमृत शुद्ध जल ही है । जो अन्य पेय हैं, जो शराब, भंग, चहा, चाफा आदि नामसे प्रसिद्ध हैं सबके सब पातक हैं । शुद्ध जलके सेवनसे शरीरका आरोग्य प्राप्त होता है । (२) जलका दूसरा नाम 'सुख' है । इससे सूचित होता है कि शुद्ध और पावेज जलके प्रयोगसे शरीरके सब (स्र) इंद्रिय (नु) उत्तम अवस्थामें रहते हैं और मनुष्यका सच्चा आरोग्य प्राप्त होता है । (३) उदकका तीसरा नाम 'अ-क्षर' है (नक्षरति न क्षरयति तद् अक्षरं) 'क्षर' का अर्थ 'To wa-ter away' अर्थात् नाशका प्राप्त होना है । क्षय नवेदिक आदि रोग जिनमें शरीरको क्षीणता होती रहती है, उनका बोध 'क्षर' शब्दसे होता है । जिसके सेवनसे क्षय आदि विनाशक रोग दूर होते हैं उसका नाम 'अ-क्षर' होता है । 'क्षय और अ-क्षय' ये शब्द 'क्षर और अ-क्षर' के समानही हैं । जलप्रयोगसे किन किन व्याधियोंका शमन हो सकता है इस बातका ज्ञान इन शब्दोंके विचारसे ही हो सकता है । पाठकोंमें जो बंध और डाक्टर होंगे उनको उचित है कि वे इन गुणोंका और नामोंका विचार करें और

जल प्रयोगसे ही आरोग्य नपाइनका मार्ग सुगम करें। ताकि लोकोंका पैसा और आरोग्य दवाईयोंकी आभिमं नष्ट न हो सके।

(४) उक्त 'अक्षर' शब्दके अर्थ बतानेवाला उद्क वाचक 'अ-हि' शब्द है। जिससे हान अथवा नाश नहीं होता, वह 'अहि' किंवा 'अ-हीन' उद्क हैं। शुद्ध उद्कके सेवनसे शरीर पर जो परिणाम हो सकते हैं, उनका ज्ञान इन शब्दोंके अर्थोंमें पाठक देखे और जगत् आदि अनाय-कारक पयोंसे दूर रह कर, इस अमृत जलका सेवन करके ही असर वें। (५) उद्क वाचक 'अ-क्षित' शब्द भी उक्त अर्थका द्योतक है।

(६) उद्क वाचक 'रेतः' शब्द पूर्वस्थलमें दियाही है। इसी अर्थका वाचक 'शुक्र' शब्द वेदमें आता है। वीर्य तेज और पावित्र्य ये इसके अर्थ हैं और शुद्ध उद्कके येही गुण हैं। शुद्ध उद्कके सेवनसे वीर्य स्थिर, पवित्र और नतेज होता है तथा अन्य मादक पयोंके सेवनसे वही वीर्य अस्थिर और निस्तेज होता है। इसलिये जो ब्रह्मचर्य रखना चाहते हैं उनको चहा काफी, सोडावाटर आदि क्षुद्र पेय पीना नहीं चाहिये। शुद्ध ज्ञात जलसे गुन इंद्रिय तथा उनके आसपासका स्थान धोने और अत्यंत निर्मल रखनेसे वीर्यकी स्थिरता प्राप्त होती है; वद् प्रदेश मलिन रखनेसे उष्णता उत्पन्न होकर वीर्य पनल होता है। इस विषयका अनुभव कई विद्यार्थियोंपर लिया है, कि जिनका ब्रह्मचर्य भ्रष्ट हुआ था; परंतु ज्ञात जलके प्रयोगसे उनको ऐसा आराम

प्राप्त हुआ कि जैसा दवाइयोंसे प्राप्त होना असंभव था । ब्रह्मचर्य रक्षाके लिये इस भागपर शीतजलका प्रयोग अत्यंत लाभ-दायक होता है ।

(७) जलवाचक नामोंमें ' तेजः , ओजः , सह. ' शब्द हैं । शुद्ध जलके सेवनसे शरीरका तेज, ओज अर्थात् बल, और शरीरकी सहन शक्ति प्राप्त होसकती है । अपेयपान करने-वालोंको उचित है कि वे शुद्ध जलके इन गुणोंका परिशीलन करे और घुरी आदतोंमें अपने आपको बचावें ।

(८) जल वाचक नामोंमें ' पवित्र ' शब्द आगया है । स्नानसे शरीर आदिकी पवित्रता होती है । वास्ति आदिसे शरीर की आंतरिक पवित्रता होती है । और नम्य विधिसे नासिका आदि इंद्रियोंकी भी पवित्रता होती है । जलप्रयोगमें इन्द्रिय पवित्र किया जा सकता है और इन प्रयोगोंमें अपूर्व लाभ होता है ।

(९) उक्त शब्दोंसे जल चिकित्साकी सूचना मिलती है । जलचिकित्सा शास्त्र (Hydropath.) वेदमें है । इसका विस्तार पूर्वक वर्णन किसी अन्य समयमें किया जायगा, यहा जलवाचक दो शब्द ही देखने योग्य हैं । भेषजं (Medicine), जलापं (Healing) ये दो शब्द जलवाचक हैं । इनमें वैदिक जल-चिकित्साकी स्पष्ट कल्पना प्राप्त हो सकती है । जलका ' भेषज ' नाम बताता है कि जलमें सब दवाइयां हैं, तथा ' जलाप ' शब्द बताता है कि उसमें (Healing power) आरोग्यवर्धनके गुण हैं । वेदका यह उपदेश है । सब औषधियोंका कार्य अकले

जलसे साध्य हो सकता है । फिर वैदिकधर्मी लोक मारे मारे दवाइयोंके पीछे क्या अपना आरोग्य और पैसा गमा रहें हैं ? वेदके ये शब्द विगेष हेतुसे बने हैं । ये गपोडे नहीं हैं । जिनका विश्वास न होगा उनको उचित है कि वह जलप्रयोगका अनुभूति लेवे और देखे कि कितना लाभ होता है । परन्तु लोकोंका यह आश्चर्य प्रसिद्ध है, कि वे सुलभ साध्य अमृतजलको दूर करके सब लोक कष्टसाध्य विपरूप दवाइयोंके पीछे पड़नेमें अपना पराकाष्ठा कर रहे हैं । यह निःसंदेह बड़ा भारी आश्चर्य है । वेद मंत्रोंका उपदेश दूर रखा जाय और यदि केवल वैदिक शब्दार्थोंके साथही लोकोंका परिचय हो जाय, तो भी कितना लाभ हो सकता है ।

(१०) आगे जल वाचक शब्द 'स्व-धा' है । इसका शब्दार्थ (One's own vitality) अपनी धारणा शक्ति है । जिससे शरीरकी धारणाशक्ति (Vitality) कायम रहती है उसका यह नाम है । जल अप्राप्त होनेसे मनुष्यका जीवन भी अशक्य हो जायगा, इतना इस जलका जीवनके साथ संबंध है । प्रत्येक पदार्थमें अपनी अपनी स्वधा शक्ति रहती है, जिससे उस पदार्थका पदार्थत्व स्थिर रहता है । प्राणियोंके शरीरमें जलके आश्रयसे उक्त स्वधाशक्ति रहती है । इसके पश्चात् निम्न शब्द देखिये (११) ' सु—क्षेम ' अर्थात् ' उन्नम आरोग्य ' (१२) ' धरुणं ' —धारक और पोषक, (१३) ' वारि ' रोगोंका निवारण करनेवाला, (१४) ' शुभं ' —हितकारक (१५)

‘ क्षत्रं ’—(क्षतात् त्रायते) क्षय, क्षीणता, क्षत, व्रण आदिकोंसे वचाता है इसलिये जलका नाम क्षत्र है । (१६) सव आप-धियोंका सार होनेसे इसका नाम ‘ रस ’ है । (१७) शुद्ध जलके संवनसे चित्तकी प्रसन्नता और अतःकरणकी तृप्ती होती है, इसलिये इस जलका नाम ‘ तृप्ती ’ है । इस प्रकार वेदमे जलके असुद्ध नाम दू, जिनका विचार करनेसे जलके विविध गुणोंका विज्ञान होता है ।

(१८) ‘ पुरीषं ’ यह जलवाचक वैदिक शब्द है । ‘ पुरि ’ अर्थात् शरीरमें जो दृष्ट होता है किवा आवश्यक होता है वह पुरीष कहलाता है । गौचशुद्धि करनेवाले यमभी इसमें है । शरीरमे जलाशय कम होनेसे बद्ध कोष्ठ अथवा कब्जी होती है । (१९) जलसे शरीरका तेज बढ़ता है इस लिये इसका वैदिक नाम ‘ धृत ’ है । (२०) जलका मे-वन करना आवश्यक होता है इसलिये इसका ‘ वर्न ’ नाम है । (२१) जलमे शांति प्राप्त होती है इस लिये इसको ‘ शं-वर ’ अर्थात् शांतिका पोषण करनेवाला कहते हैं ।

इस प्रकार जलवाचक सौ नाम अत्यंत महत्वपूर्ण हैं । हर एक वेदाभ्यासा सज्जनको इनका विचार करना अत्यंत आवश्यक है । इस प्रकार पाठक जान सकत है कि जो गूढ़ी वैदिकभाषाके शब्दोंमें है, वह किसी अन्य भाषाके शब्दोंमें नहीं है । यहा प्रत्येक शब्द एक एक स्वतंत्र रूपसे उन पदार्थका लक्षण और व्याख्यान करता है । प्रत्येक शब्द केवल शब्द मात्र नहीं है, परंतु प्रत्येक शब्द पदार्थका लक्षण बताता है । अस्तु इस

प्रकार शब्दोंका महत्व सूक्ष्मरूपसे देखनेके पश्चात् वेद मंत्रोंमें जलके विषयमें जो कुछ कहा है, यहां थोड़ासा देखेंगे—

आपो अस्मान्मातरः शुन्ध्युवन्तु ।

घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ॥

विश्वं हि रिपं प्रवहन्ति देवीः ।

उदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि ॥

युज. ४ । २

(मातरः आपः) हितकारक जल हम सबको (शुन्ध्युवन्तु) शुद्ध करे । (घृत-प्वः आपः) तेजोवर्धक उदक हम सबको (घृतेन) तेजसे (पुनन्तु) पवित्र करे । (देवीः आपः) दिव्य उदक (विश्वं रिपं) सब मूलको शरीरसे (प्रवहन्ति) बहा देता है । (आभ्यः) इस उदकसे (शुचिः पूतः) शुद्ध और पवित्र बन कर मैं (उन् एमि) उन्नतिको प्राप्त हो जाऊंगा । तथा—

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजं ।

अपामुत प्रशस्तये देवा

भवत वाजिनः ॥

क्र. १ । २३ । १९

(अप्सु अंतः अमृतं) जलके अंदर अमृत है । (अप्सु भेषजं) उदकके अंदर औषध है । हे देवो ! (अपां प्रशस्तये) उदककी प्रशंसा करनेके लिये (वाजिनः भवत) उत्साहित हो जाइए । इन मंत्रोंसे जलरूप औषधका महत्व वेदकी दृष्टिसे कितना है, इसका ज्ञान हो सकता है । इस मंत्रका अर्थ करते हुए म. ग्रिफिथ

साहब अपने भाषान्तरमें लिखते हैं कि In waters there is healing balm, अर्थात् जलमें रोगनिवारक दवाई है । तथा—

अप्सु मे सोमो अन्नवीद्

अन्तर्विश्वानि भेषजा ॥

अग्निं च विश्वशंभुवं

आपश्च विश्वभेषजीः ॥

ऋ. १ । २३ । २०

‘मुझे सोमराजाने कहा कि (अप्सु अतः) जलके अंदर (विश्वानि भेषजा) सब औषधिया हैं । जैसा अग्नि हितकारक है उसी प्रकार (विश्वभेषजी आपः) सब दवाइयां जलमें है । ”

म. ग्रिफिथका भाषान्तर — Within the waters.. dwell all balms that heal waters hold all medicines तथा—

इदमापः प्रवहत यत्किंच दुरितं मयि ॥

ऋ १ । २३ । २२

‘जो कुछ दुरित मेरे मे होगा जल उसको बाहर निकाल देवे । ’ इस मंत्रमें शरीरके मव दोष जलद्वारा दूर होते हैं इस बातका उपदेश है । ‘दुरित’ शब्द यहां विशेष महत्वका है । (दुः—इत) अर्थात् जो बुराई अंदर प्रविष्ट हुई है। शरीरमें जो विजातीय द्रष्ट पदार्थ (foreign matter) अंदर गया है और जिससे बीमारी आदि उत्पन्न होती है उसका नाम (दुः—इत=दुर्गत) दुरित है । यही पाप है । इसको शरीरसे बाहर निकालना और शरीरकी शुद्धि करना जलका कार्य है । इस प्रकार जल-

द्वारा शरीरकी अंतर्वाह्य शुद्धि होकर आरोग्य प्राप्त हो सकता है । तथा—

आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीव -

चातनीः ॥ आपः सर्वस्य भेषजी -

स्तास्ते कृण्वतु भेषजम् ॥ ऋ. १०।१३७।६

‘जल निश्चयसे दवाई है । जल निश्चयसे संपूर्ण रोगोंको दूर करता है । (आपः सर्वस्य भेषजोः) जल सब रोगोंका औषध है । वह जल तेरे लिये औषध होवे । ’ इसका भाषांतर म.ग्रिफिथ निम्न प्रकार करते हैं— ‘The waters have their healing power, the waters drive diseases away The waters have a balm for all, let them make medicine for thee- इससे अधिक जलका वर्णन क्या हो सकता है ?

इस प्रकार अमृत रूप जल है । उस शुद्धजलका सेवन न करते हुए दूसरे पेय पदार्थोंका स्वीकार करना यह सर्वथा हानिकारक है । शराब, भंग, चहा, काफी, सोडावाटर आदि सब पेय पदार्थ मूल शुद्ध जल पानकी अपेक्षा अत्यंत हानिकारक हैं । इसलिये धार्मिक लोकोंको उचित है कि अपने वैदिक धर्मकी आज्ञाका पालन करनेकी अभिलाषासे वे अन्य हानिकारक पेयोंको दूर करे और शुद्ध जलके प्रयोगसे अपने शरीरकी अंतर्वाह्य शुद्धि करके अपना आरोग्य संपादन करें और दीर्घ जीवन धर्मके मार्गसे व्यतीत करें ।

वैदिक धर्म के अमूल्य ग्रंथ ।

योग-साधन-माला ।

१ संध्योपासना । योगकी रीतिसे संध्या करनेकी

पद्धति । मूल्य १॥) डेढ रु.

२ संध्याका अनुष्ठान । मू. ॥) आठ आने ।

३ वैदिक-प्राण-विद्या । प्राणायामपूर्वार्ध ।

मू. १) एक रु. ।

४ ब्रह्मचर्य । सचित्र । वीर्यरक्षणके उपाय ।

मूल्य १।) सवा रु. ।

५ योगसाधन की तैयारी । मूल्य १) एक रु. ।

६ आसन । शरीरस्वास्थ्य के उपाय । मू. २) दो रु.

[२] उपनिषद् - ग्रंथ - माला ।

१ "ईश" उपनिषद् की व्याख्या ।

मू. ॥) चोदह आने ।

२ "केन" उपनिषद् की व्याख्या । मू. १।) सवा रु. ।

[३] आगम-निबंध-माला ।

- १ वैदिक-राज्य-पद्धति । मू. १) पांच आने ।
- २ मानवी-आयुष्य । मू. १) चार आने ।
- ३ वैदिक सभ्यता । मू. ॥) बारह आने ।
- ४ वैदिक-चिकित्सा-शास्त्र । मू. १) चार आने ।
- ५ वैदिक स्वराज्य की महिमा । मू. ॥) आठ आने ॥
- ६ वैदिक सर्पविद्या । मू. ॥) आठ आने ।
- ७ मृत्युको दूर करनेका उपाय । मू. ॥) आठ आने ॥
- ८ वेदमें चरखा । मू. ॥) आठ आने ।
- ९ शिवसंकल्पका विजय । मू. ॥) बारह आने ।
- १० वैदिकधर्मकी विशेषता । मू. ॥) आठ आने ।
- ११ तर्कसे वेदका अर्थ । मू. ॥) आठ आने ।
- १२ वेदमें रंगजंतु शास्त्र । मू. ३) तीन आने ।
- १३ ब्रह्मचर्यका विज्ञ । मू. ३) दो आने ।

[४] स्वयं-शिक्षक-माला ।

- १ वेदका स्वयंशिक्षक । प्रथम भाग । मू. १॥) डेढ़ रु ।
- २ वेदका स्वयंशिक्षक । द्वितीय भाग । मू. १॥) डेढ़ रु ।

आसन।

“ योग की आरोग्य वर्धक व्यायाम पद्धति ”

अनेक वर्षों के अनुभवसे यह बात निश्चित हो चुकी है कि शरीर स्वास्थ्यके लिये आसनोका आरोग्य वर्धक व्यायाम ही अत्यंत सुगम और निश्चित उपाय है।

इस समय तक बाल, तरुण, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, रोगी तथा अशक्त मनुष्यों को भी इस योग की आरोग्य वर्धक व्यायाम पद्धति से बहुत ही लाभ हुआ है।

अशक्त मनुष्य इससे अपना स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं और नीरोग मनुष्य अपना स्वास्थ्य स्थिर रख सकते हैं।

इस पद्धतिका संपूर्ण स्पष्टीकरण इस पुस्तक में है। मूल्य केवल २) रु. है। शीघ्र मंगवाइये।

मंत्रो-स्वाध्याय मंडल, ओध (जि. सातारा)

मुद्रक तथा प्रकाशक — श्रीपाद दामोदर सातवळेकर।
भारत मुद्रणालय, स्वाध्याय मंडल, ओध (जि. सातारा)

